THE TIMES OF INDIA

Date: 07-03-26

Stillborn Ideas

Why netas shouldn't fret about ageing population

TOI Editorial

Andhra has proposed 25k as incentive for couples to produce a third child. Couples are smiling-not about making Baby No.3, but at CM Naidu's touching faith that 25k is incentive at all. Everyone knows, making a baby is one thing, raising a child quite another. It takes a village. A child needs investment in hard cash over many years for food, health, education. Naidu well knows people are having fewer children for very practical reasons-urbanisation, education, high living costs, job insecurity all contribute to falling birth rates.

But why fear an ageing population that Andhra has cited as the cause for its incentive? Policy must square progress in achieving population stability (longevity + falling fertility rate) with innovations that'll cater to an elder population. Ageing societies reflect proper diet, health and living standards. High life expectancy is a sign people are living healthier for longer. That's good, right? Add to that a rapidly automating world. Take Japan, for instance. It doesn't lament its greying society but instead, is encouraging older people to keep working or take up part-time jobs. Companies and govt support training for older workers to stay productive in work where experience counts. It is hugely investing in robots and AI to help in factories, transport, farming and elder care too. It's bringing younger foreigners for work that can't be automated. What it hasn't done is ask its people to make more babies. Couples can make babies, no problem - it's for Naidu to provide schools, hospitals, nutrition programmes and jobs for future workers. Give that a second thought.

THE ECONOMIC TIMES

Date: 07-03-26

Trained Guides Add Value to Destinations

ET Editorial

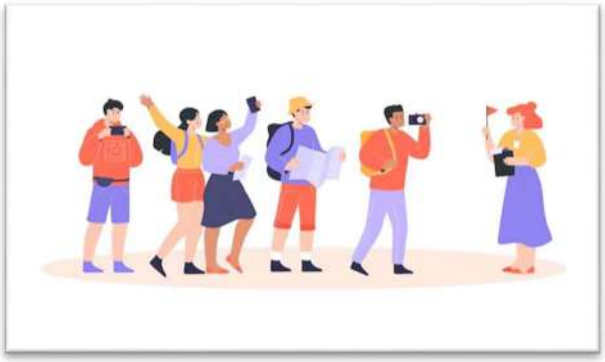

Tour guides are central to shaping a tourist's experience. Beyond providing information, they interpret culture, history and local nuances, making visits meaningful and memorable. Yet, despite their importance, tour guides often rank low on the priority list of tourism strategies. IIMs' initiative to up- skill 10,000 guides across 20 iconic sites-anudge from the budget-signals both Gol's and stakeholders' recognition of the value of professionalised tourism services. By investing in human capital, the programme can create structured opportunities to improve visitor experiences and standardise quality.

Tour guides, however, operate within a broader ecosystem that determines a tourist's satisfaction. Ease of travel, diverse tranport options and seamless connectivity set the initial tone. Comfortable, safe and clean accommodation that matches expectations is critical, as are effective measures against crime. Tourists' perception of value depends not just on services that the sector can provide but also on the preservation of the destination's unique character. Issues such as congestion, over-tourism, uncontrolled construction and commercialisation can undermine even the best-guided visits.

Sustainable tourism requires a systems approach that balances visitor experience with local needs. IIM expertise can help design interventions that manage tourist flows, guide construction and commercialisation, and integrate trained guides into a coherent strategy. Thoughtfully applied, such initiatives enhance local livelihoods, preserve the destination's appeal, and ensure that tourist sites remain both economically productive and culturally vibrant for years to come-making it imperative for policymakers and stakeholders to act decisively now.

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 07-03-26

दिखावटी समावेश

संपादकीय

इक्कीसवीं सदी के तीसरे दशक के मध्य तक पहुंच जाने के बाद भी भारतीय कंपनियों में लौंगिक विविधता यानी महिला और पुरुष का समान प्रतिनिधित्व अभी तक नहीं हो पाया है। कॉरपोरेट कार्य मंत्रालय के अनुसार, इस वर्ष जनवरी में पंजीकृत निदेशकों में से 68 फीसदी पुरुष थे। मंत्रालय के नवीनतम बुलेटिन में बताया गया है कि यद्यपि 'निदेशक पहचान संख्या' के लिए नए पंजीकरणों की संख्या में प्रति वर्ष वृद्धि हो रही है, फिर भी वह अनुपात पिछले चार वर्षों से एक जैसा है। इस मामले में निजी कंपनियां सरकारी कंपनियों से बेहतर प्रदर्शन कर

रही है। सरकारी कंपनियों के निदेशकों में महिलाओं की हिस्सेदारी 20 फीसदी जबकि निजी कंपनियों में 29 फीसदी है। महारत्न और नवरत्न कंपनियों की बात करें तो स्थिति और भी खराब है। एक्सीलेंस एनेबलर्स द्वारा किए गए एक अध्ययन से पता चला है कि वित्त वर्ष 2025 में उच्च प्रदर्शन करने वाली सरकारी कंपनियों की इस श्रेणी में केवल 11 फीसदी महिला निदेशक थीं।

भारत में निजी कंपनियों को सामाजिक प्रगति का प्रतीक नहीं माना जाना जाता है। नियमों के अनुसार, 300 करोड़ रुपये से अधिक के सालाना कारोबार वा 100 करोड़ रुपये या उससे अधिक की चुकता पूंजी वाली सूचीबद्ध कंपनियों में कम से कम एक महिला निदेशक का होना अनिवार्य है। कई कंपनियां प्रवर्तकों या उनके रिश्तेदारों को इस पद पर नियुक्त करके कानून का अक्षरशः वानी दिखावटी पालन करती हैं, न कि उसकी भावना के अनुरूप बाद में शीर्ष 1,000 सूचीबद्ध कंपनियों के लिए नियमों को सख्त किया गया ताकि कम से कम एक स्वतंत्र महिला निदेशक की नियुक्ति अनिवार्य हो सके। मार्च 2025 तक नैशनल स्टॉक एक्सचेंज में सूचीबद्ध लगभग 97 फीसदी कंपनियों के बोर्ड में कम से कम एक महिला निदेशक है। हालांकि इसे उत्साहजनक प्रगति के रूप में देखा जाना चाहिए, लेकिन आधे से अधिक कंपनियों में केवल एक महिला निदेशक है। यह तथ्य नियामकीय अनुपालन के प्रति दिखावटी दृष्टिकोण को दर्शाता है। फिर भी, भारत ने निस्संदेह प्रगति की है। सबसे हालिया आंकड़ों की तुलना वर्ष 2014 से की जानी चाहिए, जब लैंगिक विविधता कानून लागू हुआ था और उस समय महिला निदेशकों की संख्या कॉरपोरेट निदेशकों में केवल 5 फीसदी थी। दिलचस्प यह है कि इस मामले में भारत, चीन से आगे है। चीन में राज्य के स्वामित्व वाली कंपनियों में बोर्ड की सीटों में महिलाओं की हिस्सेदारी केवल 13 फीसदी और निजी कंपनियों में 18 फीसदी है।

पुरुष निदेशकों की तुलना में महिला निदेशकों की लगातार कमी का एक पहलू कार्य संस्कृति से संबंधित है। कई संगठनों में लैंगिक विविधता की कमी देखी जाती है, जहां प्रतिकूल सामाजिक परिवेश के कारण महिलाएं चुनौतीपूर्ण मध्य-प्रबंधन स्तरों पर भी नौकरी छोड़ देती हैं। यह असमानता स्पष्ट रूप से महिला विरोधी सोच और महिलाओं को मानव संसाधन या कॉरपोरेट सामाजिक उत्तरदायित्व जैसी 'नरम' भूमिकाओं में धकेल दिए जाने में दिखाई देती है। इनके अलावा ऐसी सामाजिक गतिविधियों, जिनमें महिला सहकर्मियों को शामिल नहीं किया जाता है (उदाहरण के लिए, काम के घंटों के बाद 'बार' में बैठक) या कार्य समय के बाद बैठकें आयोजित करने में भी यह असमानता झलकती है। चूंकि अधिकांश भारतीय महिलाएं घरेलू काम, बच्चों की देखभाल और बुजुगों की देखभाल का बोझ उठाती है, इसलिए इस तरह की भेदभावपूर्ण प्रथाएं कॉरपोरेट जगत में उनकी प्रगति में बाधक साबित होती है। ये संरचनात्मक मुद्दे हैं जिनका समाधान कानून द्वारा एक हद तक किया जा सकता है। अधिक आर्थिक उदारीकरण भी लैंगिक विविधता की गारंटी दे सकता है। सूचना प्रौद्योगिकी क्षेत्र को छोड़कर भारतीय कंपनियां वैश्विक प्रतिस्पर्धा का सामना करने के बजाय अपेक्षाकृत सुरक्षित घरेलू बाजारों पर ध्यान केंद्रित करती हैं। यह कारक अकेले ही प्रतिभा की मांग को कम कर देता है। वैश्विक आपूर्ति श्रृंखलाओं के साथ एकीकरण से प्रतिभाओं के लिए बाजार स्वतः ही विस्तारित हो जाएगा, जिससे योग्य महिलाओं के साथ भेदभाव करना मुश्किल हो जाएगा।

जनसत्ता

Date: 07-03-26

न्याय की गति

संपादकीय

अगर किसी नागरिक को न्याय पाने के लिए वर्षों तक इंतजार करना पड़े, तो आखिर उसका क्या महत्त्व रह जाता है ! माना जाता है कि समय पर न्याय न मिलना अन्याय के समान होता है। मगर इसे विडंबना ही कहा जाएगा कि देश में बड़ी संख्या में लोगों को इस तरह के संकट का सामना करना पड़ता है। न्याय में देरी के कई कारण हो सकते हैं, जिनमें लंबित मामलों का बोझ, न्यायाधीशों की कमी और जटिल न्यायिक प्रक्रिया भी शामिल है। मगर, जब अदालती कार्यवाही पूरी होने के बाद भी वर्षों तक न्याय के लिए प्रतीक्षा करनी पड़े, तो उसे किस रूप में देखा जाएगा। सर्वोच्च न्यायालय ने हाल ही में ऐसे ही तीन आपराधिक मामले इलाहाबाद उच्च न्यायालय से अपने पास स्थानांतरित किए हैं। इन मामलों में उच्च न्यायालय ने छह वर्ष पहले फैसला सुरक्षित रख लिया था, जिन पर अब तक निर्णय नहीं सुनाया गया है। शीर्ष अदालत ने कहा कि न्याय में हो रही असाधारण देरी से पीड़ित पक्ष के त्वरित न्याय के अधिकार पर सीधा असर पड़ रहा है।

किसी भी नागरिक को न्यायपालिका पर पूरा भरोसा होता है कि उसे न्याय अवश्य मिलेगा। मगर न्याय में देरी पीड़ितों को न केवल आर्थिक, बल्कि मानसिक, भावनात्मक और सामाजिक रूप से भी नुकसान पहुंचाती है। सर्वोच्च न्यायालय ने भी अपने फैसले में माना है कि समय पर न्याय न मिलना कानून के शासन के लिए नुकसानदेह हो सकता है। यह सच है कि देश में लंबित मुकदमों का बोझ भी समय पर न्याय न मिलने का एक बड़ा कारण है। राष्ट्रीय न्यायिक डेटा ग्रिड के आंकड़ों के मुताबिक, दिसंबर, 2025 तक देश भर की अदालतों में पांच करोड़ से अधिक मुकदमे लंबित हैं। माना जाता है कि न्यायाधीशों की कमी और लंबी एवं जटिल न्यायिक प्रक्रिया की वजह से भी मामलों की सुनवाई में देरी होती है। ऐसे में सरकार और न्यायपालिका को मिलकर यह सुनिश्चित करना चाहिए कि मुकदमों की बढ़ती संख्या के लिहाज से न्यायाधीशों की कमी को दूर किया जाए,

न्यायिक प्रक्रिया को सुलभ एवं सरल बनाया जाए और अदालती कार्यवाही पूरी होने पर न्याय में किसी तरह की देरी न हो, ताकि न्यायपालिका पर आम लोगों का भरोसा कायम रहे।

Live हिन्दुस्तान .com

Date: 07-03-26

नेपाल में बदलाव की बयार बालेन शाह

पुष्परंजन, (वरिष्ठ पत्रकार)

रेपर से राजनेता बने बालेंद्र शाह (या बालेन शाह) को 2013 तक नेपाल में कोई ठीक से नहीं जानता था। मई 2022 में उन्होंने बतौर निर्दलीय उम्मीदवार काठमांडू का मेयर पद जीतकर मुख्यधारा की पार्टियों को चौंका दिया था। 'राष्ट्रीय स्वतंत्र पार्टी' अब बालेन शाह की पार्टी है, जिसकी स्थापना 21 जून, 2022 को पत्रकार रबी लामिछाने ने की थी। राजनीतिक अस्थिरता, भ्रष्टाचार, गरीबी व बेरोजगारी ने वहां जेन जी आंदोलन की भूमिका तैयार की थी। तब सबने बालेन शाह पर कार्यकारी पीएम बनने का दबाव बनाया, मगर शाह शतरंज की गोटियां खेलना जानते हैं। उन्होंने बड़ा दांव खेला। सीधे पूर्व प्रधानमंत्री खड्ग प्रसाद शर्मा ' ओली' के खिलाफ ताल ठोक दिया। नतीजा सामने है।

पिछले साल जेन-जी आंदोलन के बाद ओली की जिंदगी में नया अध्याय शुरू हुआ, जिसे कई विश्लेषक उनकी 'सियासी मर्सिया' के तौर पर देखते हैं। 8-9 सितंबर, 2025 के प्रदर्शनों के दौरान जब विद्रोहियों ने उनके बालकोट वाले घर में आग लगा दी, तो ओलीको मकवानपुर जिले के सुपरितार में नेपाली आर्मी के बैरक में पनाह लेनी पड़ी। बैरक से लौटने के बाद ओली ने पत्नी राधिका शाक्य के साथ भक्तपुर के गुंडू में एक किराये के घर में नई जिंदगी शुरू की। अपने घर के बचे हुए हिस्से के बीच खड़ी राधिका ने कहा था, 'हमने नई पीढ़ी को एक लाइब्रेरी गिफ्ट करने के बारे में सोचा था । आखिर में, हमें उन्हें राख देनी ही होगी।'

ओली ने दिसंबर 2025 में हुए नेपाल कम्युनिस्ट पार्टी 'एमाले' के 11वें महाधिवेशन में जोड़-तोड़ से अध्यक्ष के तौर पर तीसरा कार्यकाल हासिल कर तो लिया, पर झापा के मतदाताओं ने उन्हें इस बार नकार दिया। साल 2017 के चुनावों के बाद दो बार लगभग दो-तिहाई बहुमत वाली सरकार के मुखिया होने के बावजूद ओली ज्यादा समय तक सत्ता में न टिक पाए। फिर भी, वह बिना डरे अपनी बात कहने के लिए जाने जाते हैं। जब भी उनकी

कुर्सी हिलती, ठीकरा भारत पर फोड़ते । पुष्पकमल दाहाल 'प्रचंड' भी भारतको कोसने से बाज नहीं आते थे। इस दफा इन दोनों को नेपाल की जनता ने भारत पर दोषारोपण का अवसर नहीं दिया।

साल 1990 में बहुदलीय लोकतांत्रिक व्यवस्थाकी बहाली के बाद, ओली मुख्यधारा की राजनीति में आ गए। वह चार बार प्रधानमंत्री रहे। उन्होंने 'समृद्ध नेपाल, सुखी नेपाली' का नारा दिया। साल 2015 की भारतीय नाकाबंदी के खिलाफ मजबूती से खड़े रहे। लिंपियाधुरा और लिपुलेख का विवाद खड़ा करके कट्टर वामपंथी से कट्टर राष्ट्रवादी बन गए। कम्युनिस्ट केपी शर्मा ओली ने तो नेपाल में राम जन्मभूमि भी ढूंढ लिया था, लेकिन उनके आलोचक उन्हें सत्ता का भूखाराजनेता मानते हैं, जो असहमति बर्दाश्त नहीं करता ।

ओली के पूर्व गठबंधन सहयोगी और पांच बार नेपाल के प्रधानमंत्री रहे शेर बहादुर देउबा तो अपनी पार्टी की अध्यक्षता भी हार गए। देउबा कई दशकों में पहली बार अपने पारंपरिक गढ़दादेलधुरा से चुनाव नहीं लड़े | मतलब, जिन पूर्व प्रधानमंत्रियों को नेपाल ने बार- बार अवसर दिया था, इस बार 'सिंहासन खाली करो कि जनता आती है' जैसा स्पष्ट संदेश दे दिया ।

ऐसा हुआ कैसे? ऑनलाइन व्यवहार के अध्येता और प्रौद्योगिकी विशेषज्ञ डोवन राय के मुताबिक, 'यह बहुत भावुक दौर है। लोग अपनी मनोदशा के आधार पर फैसले ले रहे हैं, जिन्हें एल्गोरिदम और बढ़ा देता है।' फेसबुक के एल्गोरिदम पर गौर करने से पता चलता है, जो सामग्री भावनात्मक प्रतिक्रिया पैदा करती है- खासकर गुस्सा, प्रेरणा या चिंता, वहलाइक करने वालों को ज्यादा उद्वेलित करती है।

फिलीपींस, भारत, म्यांमार और बांग्लादेश के चुनावों में फेसबुक की भूमिका की जांच से पता चला कि कैसे व्यक्ति प्रेरित भावनात्मक राजनीतिक सामग्री घातक परिणाम देती है। म्यांमार में संयुक्त राष्ट्र के जांचकर्ताओं ने पाया कि फेसबुक के एल्गोरिदम ने हेट स्पीच और गलत जानकारी को बढ़ाया था, जिससे रोहिंग्या मुसलमानों के खिलाफ हिंसा हुई। अंततः कंपनी को 2018 में यह मानना पड़ा कि 'सामाजिक बंटवारे को बढ़ावा देने और हिंसा भड़काने' में अपने प्लेटफॉर्म के इस्तेमाल को रोकने के लिए उसने काफी कुछ नहीं किया। यह सिलसिला आगे तेज हुआ।

श्रीलंका का 'अरागलया मूवमेंट', जिसका अर्थ है- संघर्ष । जेन - जी युवाओं ने 'गोटागोगामा' का नारा दिया, यानी गोटा अपने गांव जाओ। यह राष्ट्रपति गोटाबाया राजपक्षे के लिए था, जिनके परिवार ने पिछले 18 में से 15 साल तक देश पर राज किया था। महिंदा और गोटा राजपक्षे को देश छोड़कर भागना पड़ा। चुनाव हुए, पर उनके कुनबे को जनता नकार चुकी थी।

नेपाल, बांग्लादेश का जेन-जी आंदोलन का तरीका श्रीलंका जैसा ही हिंसक था। इन तीनों देशों में सत्ता पर लंबे समय तक राज करने वालों का भविष्य अनिश्चित हो चुका है। नेपाल में 'राजा लाओ, देश बचाओ' का नारा भी निरर्थक साबित हुआ। राजनीतिक अस्थिरता से आजिज आ चुके लोगों के पकिटनुमा समूह में सांविधानिक राजतंत्र

की वापसी की चाह जोर मारने लगी थी, लेकिन अंततः राष्ट्रीय प्रजातंत्र पार्टी को लोगों ने अनसुना कर दिया। अग्रणी दलों में बालेन शाह की राष्ट्रीय स्वतंत्र पार्टी, केपी शर्मा ओली की नेकपा (एमाले), नेपाली कांग्रेस, और प्रचंड की नेपाली कम्युनिस्ट पार्टी मैदान में खड़ी दिखी ।

क्या दक्षिण एशिया जेन - जीक्रांति के लिए उपजाऊ है ? हालात और वजहें अलग-अलग थीं। ठीक से देखा जाए, तो बांग्लादेश में जो युवाजेन जीक्रांति की कमान सम्हाले हुए थे, उन्हें जमात-ए-इस्लामी से गठबंधन करना पड़ा। फिर भी दक्षिण एशिया के प्रदर्शनकारियों ने एक-दूसरे से सीखा है।

बहरहाल, केपी शर्मा ओली इसबार अपनेनिर्वाचन क्षेत्र झापा- पांच से हिले तक नहीं। उसकी वजह उनके प्रतिद्वंद्वी बालेन शाह थे । काठमांडू का पहली बार मेयर बना युवा अगर चार बार के प्रधानमंत्री को पराजित कर दे, तो इसका मतलब क्या होता है? झापा, नेपाली वामपंथी आंदोलन का लेनिनग्राद है। सीमा पार पश्चिम बंगाल का नक्सलबाड़ी उसे ईंधन देता रहा। जिस झापा में वामपंथ की बयार बहती हो, वहां से बालेन शाह जीत जाएं, इसके राजनीतिक निहितार्थ को समझिए ।

बालेन शाह किसके पसंदीदा है? साल 2023 में भारत द्वारा 'ग्रेटर इंडिया' का एक भित्ति चित्र स्थापित करने के बाद बालेन शाह ने अपने कार्यालय में एक 'ग्रेटर नेपाल' मानचित्र लटका दिया, जिसमें ऐसे भारतीय क्षेत्र भी शामिल थे, जिसकी दावेदारी नेपाल करता रहा है। इससे आप समझ सकते हैं, चीन को किस तेवर का नेता चाहिए। यह नेपाल का नया यथार्थ है । इसे नई दिल्ली को स्वीकार करने में देर नहीं करनी चाहिए।

Date: 07-03-26

आधी आबादी की मजबूती के लिए अभी बहुत काम बाकी

अनीता भटनागर जैन, (पूर्व आईएएस अधिकारी)

इस बार महिला कैदियों के साथ होली खेलने के क्रम में कई वृद्ध औरतों को देखकर आश्चर्य हुआ। पता चला किस्टांप ड्यूटी की कम दरकालाभलेने के लिएकईपुत्रों ने अपनी माओं के नाम से जमीन खरीदी और फिर उनको एक से अधिक बार बेच दिया। नतीजतन, धोखाधड़ी के इन मामलों में माताएं वृद्धावस्था में जेल पहुंच गईं। इसी तरह, पिछले दिनों विद्यालयों के एक ऑनलाइन कार्यक्रम के दौरान जब ग्रामीण क्षेत्र की बालिकाओं ने यह कहा कि वे पायलट और वैज्ञानिक बनना चाहती हैं, तो असीम प्रसन्नता हुई । हैन महिलाओं की स्थिति के ये दो बिल्कुल विपरीत पहलू ?

इस साल अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस का विषय है- अधिकार, न्याय, कार्रवाई, यानी महिलाओं और लड़कियों के व्यक्तिगत, सामाजिक, आर्थिक और न्यायिक विकास से जुड़े सभी अवरोधों को समाप्त कर उन्हें समान अधिकार और न्याय दिलाना । बेशक, विश्व की 49.5 फीसदी आबादी महिलाओं की है, पर कई देशों में उनकी स्थिति चिंताजनक है। संयुक्त राष्ट्र के अनुसार, दुनिया के किसी भी देश में महिलाओं और पुरुषों में न्यायिक समानता नहीं है। पुरुषों को प्राप्त अधिकारों में औसतन 64 प्रतिशत ही महिलाओं को प्राप्त हैं । और, जिस दर से प्रगति हो रही है, उसके अनुसारइस न्यायिक संरक्षण की खाई को पाटने में 286 वर्ष लग सकते हैं।

अपने देश में संविधान महिलाओं को समान अधिकार मुहैया कराता है और कई कानूनों द्वारा उनके अधिकारों की व्यवस्था भी की गई है। इनके अलावा, सरकार की अनगिनत योजनाएं भी उनके उत्थान के लिए हैं। बावजूद इसके, इस तस्वीर का दूसरा पहलू स्याह है। पिछले दिनों ही उच्चतम न्यायालय ने महिला बंदियों को खुले सुधार संस्थानों में न भेजे जाने को गंभीरता से लिया है और इसे लैंगिक भेदभाव मानते हुए केंद्र व राज्य सरकारों को निर्देश जारी किया है। एक अन्य फैसले में उसने मासिक धर्म स्वच्छता के लिए राष्ट्रीय नीति बनाने और सभी विद्यालयों में छात्राओं हेतु इस बाबत जरूरी व्यवस्था करने के निर्देश दिए। ये निर्णय अत्यंत महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि यूनीसेफ ने पाया है कि भारत में करीब 71 प्रतिशत लड़कियों को मासिक धर्म के बारे में ठीक से जानकारी नहीं होती है।

महिलाओं को उपलब्ध अधिकारों का अनुमान उनकी राजनीतिक, न्यायिक, आर्थिक, सामाजिक आदि स्थिति से लगाया जा सकता है। अंतर-संसदीय संघ के अनुसार, हालांकि, भारत की वैश्विक रैंकिंग 38 है, पर वैश्विक औसत 27.2 प्रतिशत के मुकाबले भारतमें आज भी महिलाओं का प्रतिनिधित्व महज 13.84 फीसदी है। यह स्थिति तब है, जब महिला वोटरों की निर्णायक महत्ता सर्वसिद्ध है। इसी तरह, संयुक्त राष्ट्र मानता है कि महिला जज न्यायपालिका में जवाबदेही को और सुदृढ़ करती है, पर इस मामले में भी आजादी के 78 वर्ष के बाद भारत के उच्च न्यायालयों में महिलाएं केवल 14 फीसदी हैं और उच्चतम न्यायालय में तो महज एक महिला जज हैं।

आज 90 प्रतिशत से अधिक कामकाजी महिलाएं अनौपचारिक क्षेत्र में काम करती हैं, जहां उनकी न्यायिक व आर्थिक सुरक्षा बहुत ही सीमित होती है। सेहत के मामले में भी कुपोषण, एनीमिया और प्रजनन संबंधी समस्याएं बदस्तूर बनी हुई हैं। 15 से 49 साल वाली 57 प्रतिशत और गर्भधारणकरने वाली 52 प्रतिशत महिलाओं में एनीमिया, यानी खून की कमी पाई जाती है। मातृ मृत्यु दर में भी सुधार आवश्यक है। यहां महिला सुरक्षा की चर्चा भी जरूरी है। राष्ट्रीय महिला आयोग की रिपोर्ट बताती है कि 40 प्रतिशत औरतें शहरों में असुरक्षित महसूस करती हैं। सबसे कम रैंकिंग वाले शहर पटना, जयपुर, फरीदाबाद, राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली और कोलकाता पाए गए चिंता के प्रमुख क्षेत्र रात्रिकालीन सुरक्षा और सार्वजनिक परिवहन है। साफ है, महिलाओं की तस्वीर काफी बदली है, पर बहुत कुछ अब भी शेष है।

हाल ही में करीब 800 विद्यालयों के एक ऑनलाइन शैक्षिक सेशन में होली के मद्देनजर जब मैंने पूछा कि गुजिया कैसे बनाई जाती है, तो कई लड़कों ने भी अपने हाथ उठाए, जिनमें से कई ने विस्तार से गुजिया बनाने का तरीका बताया। लैंगिक रूढ़िवादिता में आए इस तरह के बदलाव को देखकर सुखद एहसास हुआ।